दिनांक :- 22-07-2020

कॉलेज का नाम :- मारवाड़ी कॉलेज दरभंगा

लेखक का नाम :- डॉ० फ़ारूक़ आज़म (अतिथि शिक्षक)

स्नातक :- प्रथम खंड (अप्रतिष्ठा/प्रायोगिक)

विषय :- प्रतिष्ठा इतिहास

इकाई :- पाँच

पत्र :- प्रथम

अध्याय :- वैदिक सभ्यता

सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन (Social changes)

वर्णव्यवस्था :- देश के विविध सांस्कृतिक और दार्शनिक आंदोलनों, राजनीतिक, विजयों, आर्यीकरण की नीति और अनार्यों से सम्पर्क बढ़ने के कारण आर्यों की सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन हुए। ये परिवर्तन प्रचुर मात्रा में हुए। ऋग्वेद के आर्य अब केवल कर्म के अनुसार वर्ण में विभक्त नहीं थे, बल्कि उन

में अनेक सामाजिक वर्ग उत्पन्न हो गये हो। यहां यह उल्लेखनीय है कि पूर्व वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था का संगठन पेशे के आधार पर हुआ था। जो लोग पठन पाठन धार्मिक व्यवस्था, कर्मकाण्ड तथा यज्ञानुष्ठान में दक्ष थे तथा दान ग्रहण करते थे वे ब्राह्मण कहे जाते थे ब्राह्मण अपने यजमानों के लिए पूजा-पाठ तथा यज्ञ करते थे वे कृषि कर्म से संबंधित समारोहों का नियोजन भी करते थे वे युद्ध में राजा की सफलता की कामना करते थे युद्ध तथा कौशल में देश की रक्षा करने वाले क्षत्रिय कहलाते थे। क्षत्रिय भूमि के स्वामी होते थे और राजनीति से सक्रिय भाग लेते थे वणिक, कृषक, पशु पालक और शिल्पी वैश्य कहलाते थे इन तीन वर्णों की सीमा सेवा और अन्य शारीरिक श्रम करने वाले दास, दस्यु थे, उन्हें 'शूद्र' कहा जाता है।

ऋग्वैदिक काल में वर्ण एक आदर्शवादी सामाजिक व्यवस्था थी और इसमें अभी कठोरता एवं रूढ़िवादिता नहीं आयी थी। सभी वर्णों के लोगों में पारस्परिक सम्बंध था और वैवाहिक सम्बंध भी होता था। एक वर्ण से दूसरे वर्ण में आना-जाना कुछ सीमा तक जारी था। परस्पर विवाह सम्बंध भी होता था। महर्षि च्यवन ने क्षत्रिय शर्याति की पुत्री सुकन्या से विवाह किया था। विदेह के राजा जनक, काशी के अजातशत्रु और पाँचाल के प्रवाहण जाबालि ने क्षत्रिय होते हुए भी ब्रह्मज्ञान में ख्याति अर्जित की थी। देवापि ने अपने भाई राजा शान्तनु के अश्वमेध-यज्ञ में प्रधान पुरोहित का कार्य किया।

लेकिन उत्तर वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था अधिक स्पष्ट और रूढ़ हो गई। ब्राह्मण वर्ण और राजवंश में कई वर्ग बन गये। ब्राह्मण कई लोगों में विभाजित हुए।

जैसे साधारण पुरोहित, राजपुरोहित, राजमंत्री, शिक्षक उपदेशक आचार्य और ऋषि। इसी प्रकार शुद्ध राजवंश, राजपुरुष शासक और सैनिक- क्षत्रिय के भी कई उपवर्ग बन गये। इसी तरह खेती, व्यापार और दूसरे उद्योग-धंधो के विस्तार से वैश्यो के अनेक वर्ग एक दूसरे से अलग हो जाते है। शूद्रो में भी पारिवारिक दास, नौकर मजदूर तथा हीन-व्यवस्था करने वाले अनेक वर्ग बन गये।

धर्म की प्रधानता के कारण समाज में ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा थी वे अपने को श्रेष्ठ मानते थे। क्षत्रियों ने ब्राह्मणों की बढ़ती हुई शक्ति का विरोध किया। ब्राह्मणों और क्षत्रियों के बीच इस कारण लम्बे समय तक संघर्ष चलता रहा। शूद्रों की सामाजिक स्थिति दयनीय थी।

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार क्षत्रिय समाज का केन्द्र था जिसके चारो ओर समाज की अन्य इकाईयाँ घूमती थी।

Scanned with CamScanner

ब्राह्मण सोम पीनेवाला, दान ग्रहण करनेवाला और स्वतंत्रता से घूमनेवाला था। वैश्य समाज के पोषण का आधार था। शूद्रों का अपना व्यक्तित्व और स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। उन्हें दूसरे का सेवक तथा दूसरे के आदेश पर काम करने वाला कहा गया है।

हम वर्णों में मतभेद बढ़ता जा रहा था। उनके अपने आचार विचार थे। उनकी वृत्ति, नियम-उपनियम, विधि-विधान में काफी फर्क था। धीरे धीरे पारस्परिक सद्भावना खत्म हो गयी। आदर्शवादी वर्ण-व्यवस्था जाति प्रथा की शिकार हुई। एक जाति को छोड़कर लोग दूसरी जाति में नहीं जा सकते थे। जाति प्रथा के नियम कठोर होते गये। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के बीच पारस्परिक आदान-प्रदान बन्द हो गया। जैसे जैसे प्रादेशिक विशेषताएँ और ब्राह्मणों की सत्ता बढ़ती गयी वैसे-वैसे वर्ण व्यवस्था की कठोरता भी बढ़ती गयी। विभिन्न वर्णों का पारस्परिक आन-जान अश्रद्धा की दृष्टि से देखा

जाने लगा। अनुलोम और प्रतिलोम विवाहों से उत्पन्न संतानों को वर्ण संकर माना जाने लगा और उनके अपने वर्ग बन गये। नयी और विविध वृत्तियों के कारण यह परम्परा अनवरत चलती रही। फलस्वरूप समाज अनेक वर्णों का संगठन बन गया जिसमें प्रत्येक वर्ग अपने स्वतंत्र विधानों से व्यवस्थित था।

उत्तर वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था की जटिलता की प्रवृत्ति का केवल आरंभ हुआ। अभी वर्ण व्यवस्था जाति की संकीर्णता में पूरी तरह बँधी नहीं थी। इस युग में राज्याभिषेक से सम्बंधित ऐसे कई सार्वजनिक अनुष्ठान थे जिनमें शूद्र भाग लेते थे। इसी तरह समाज में शिल्पियों जैसे रथकारों को ऊँचा स्थान दिया जाता था। रथकारों को उपनयन संस्कार के अधिकारियों की सूची में सम्मिलित किया गया था।

Scanned with CamScanner

इससे स्पष्ट होता है कि उत्तरवैदिक काल में वर्ण भेद की दिशा में बहुत अधिक प्रगति नहीं हुई थी।

आश्रम व्यवस्था :- उत्तरवैदिककाल में आर्यों के सामाजिक जीवन के एक और महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ था। यह परिवर्तन था आश्रमव्यवस्था का विकास। आश्रम का संबंध मनुष्य के व्यक्तिगत सुधार और संस्कार से था। आश्रम चार कारण थे आश्रम कहलाते थे। उत्तरवैदिक काल के ग्रंथों में केवल तीन आश्रमों की जानकारी मिलती है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस युग में अन्तिम आश्रम का सम्बंध रूप से स्थापना नहीं हुई थी। ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्यार्थी गुरुकुल में कठोर नियमों का पालन करते हुए विद्या और ज्ञान की प्राप्ति करता था। गार्हस्थ्य आश्रम में मनुष्य सामाजिक और धार्मिक कर्त्तव्यों का पालन करता था। परिवार और समाज के प्रति विभिन्न कर्त्तव्यों का पालन ही इस आश्रम की विशेषता थी।

Scanned with CamScanner